प्रथम- अध्याय

मोहन राकेश: व्यक्तित्व एवं कृतित्व

* प्रथम अध्याय *

मोहन राकेश :- व्यक्तित्व एवं कृतित्व

मोहन राकेश श्री. जयशंकर प्रसाद के बाद सहसा उदय होनेवाला एक ऐसा जाज्वल्यमान नक्षत्र है जो देखते ही देखते हिन्दी कहानी साहित्य के निर्मल गगन पर छा गया और फिर उसी महान विभूति के समान ही कहानी के आकाश पर अपने प्रतिभा-प्रकाश की रेखाएँ हमेशा के लिए स्थिर करके भौतिक दृष्टि से अस्त भी हो गया।

जिसे साहित्यकार, कलाकार जैसे विधात्मक नाम से अभिहित किया जाता है, उसका समग्र आकलन उसके दो रूपों से किया जाता हैं। एक - उसका व्यक्तित्व, जो कि उसका नितान्त अपना रहा करता हैं और दूसरा - उसका कृतित्व, जो कि उसका नितान्त अपना तो हुआ ही करता हैं, पर साहित्य, जीवन और समाज को वह यही कुछ दे पाता हैं, अत: यह उसका अपना नहीं होता। यह आज के संदर्भों में नितान्त आवश्यक हुआ करता हैं

कि किसी सर्जक कलाकार के कृतित्व को समझने के लिए इस बात का विश्लेषण किया जाए कि उसका व्यक्तित्व किस प्रकार के तंतुओं से बुना गया था। इसी प्रकार व्यक्तित्व के सहज एवं आन्तरिक स्वरूप का अवलोकन करने के लिए कृतित्व का विश्लेषण एवं पर्यवेक्षण नितान्त स्वाभाविक, बल्कि अनिवार्य हुआ करता है।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि प्राप्त परिस्थितियों का हाथ प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व-निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से रहा करता है। फिर कलाकार तो जिस प्रतिभा को लेकर जन्म लेता है, वह तो सभी प्रकार की परिस्थितियों के सूक्ष्म प्रभाव को बड़ी तीव्रता से ग्रहण करता है। उनका व्यक्तित्व उनके समग्र साहित्य में उतरा है इसका परिचय हम देखेंगे। अत: यहाँ इस क्रम से पहले स्वर्गीय मोहन राकेश के व्यक्तित्व का अध्ययन एवं पर्यवेक्षण करेंगे, बाद में उनके समग्र कृतित्व का, ताकि समूचे कृतित्व का समग्र स्वरूप हमारे सामने स्पष्ट उजागर हो सके। -

*

* जन्म एवं बाल्यावस्था *

बहुमुखी प्रतिभा के धनी मोहन राकेश का वास्तविक नाम मदनमोहन गुगलानी था । उनका जन्म ८ जनवरी १९२५ को अमृतसर में हुआ था। "मोहन" नाम उनकी दीदी ने सुझाया था। इसी नाम से वे अमर हो गये। इनका घर बाज़ार में होने के कारण शोर रहता था। मोहन राकेश जिस घर में रहा करते थे उसके बारे में उन्होंने कहा हैं - "घर में सीलन रहती थी। नालियों से बदबू उठती हैं। सीढ़ियाँ अँधेरी हैं। घर में दम घुटता हैं। अन्दर गली में भाग जाता हूँ। पकड़कर लाया जाता हूँ, फिर भाग जाता हूँ। "यह घुटन यह दबाव और अयाचित वातावरण चाहे मोहन राकेश को कुछ और दे सका या नहीं, पर यह एक सत्य हैं कि उनकी भावुकता, उनकी साहित्यिक प्रतिभा, उनका यथार्थ बोध, उनमें विद्यमान परिस्थितियों से जूझने की अदम्य भावना आदि सभी कुछ इसी घुटनभरे वातावरण की ही देन हैं।

निजी परिस्थितियों ने ही मोहन राकेश को भावुक बनाया साथही अत्यधिक लापरवाह भी। घर में किसी न किसी कारण को लेकर झगड़ा चलता था। बचपन में ही घरवालों से राकेश को सीख मीला करती थी कि बाहर का कोई आदमी स्नेह और विश्वास का पात्र नहीं होता, बाहर के बच्चों में बुरी आदतें होती हैं। वे लिखते हैं - "हमारे घर के पीछे कंजरों के घर थे, और मैं उन्हीं की तरह नाचना चाहता हूँ। किंतु दादी

माँ मुझे उधार झाँकने तक नहीं देती थी। कहती है - "वह घर कंजरो का है। मुझे कंजर अच्छे लगते हैं। मैं खुद उनकी तरह नाचना चाहता हूँ। मगर दादी माँ घूरकर देखती हैं, तो कंजर बनने और नाचने का सारा उत्साह गायब हो जाता है। मैं दादी माँ के घुटनों में दुबक जाता हूँ।"1

राकेशजी के घर का वातावरण धार्मिक और अंधविश्वास से भरा था। दादी माँ अन्य छोटी जाति के लोगों से संबंध नहीं रखने देती थी। इसी कारण राकेश जी का घर में दम घुटता था। तो दूसरी ओर पिताजी की साहित्यिक रुचि के कारण उनपर असर पड़ता जा रहा था।

* माता *

मोहन राकेशजी की माँ का नाम "बच्चन" था। राकेशजी अपनी माँ को "अम्मा" कहकर बुलाते थे। राकेशजी की माँ उनपर असीम विश्वास रखती थी। माँ ली अत्यन्त सहनशील और निच्छल भी थी। राकेश जी अपनी माँ के बारे में लिखते हैं - "बहुत खूब सूरत, ममता और शफाकत से भरपूर, मिठाई की तरह मीठी माँ। इतने दु:खों के बाद ऐसी मिठास कहाँ से आती है? ... शायद कुछ औरतें गन्ना होती हैं, धरती से सिर्फ मिठास ले लेती हैं, बाकी सब कुछ छोड़ देती हैं।"2 संयुक्त परिवार के कारण माँ को संमिश्र सुख-दुखों का सामना करना पड़ा था। राकेशजी की माँ को जीवन में कभी इतना सुख नहीं मिला जिससे वह निश्चिंत रही। उसके जीवन की जड़ों का आधार पति के देहांत के बाद मनोधैर्य टूट पड़ा। राकेश पर उनकी माँ खूब प्यार करती थी। माँ के व्यक्तित्व से राकेशजी प्रभावित थे। वह राकेश के हर कार्य पर मौन धारण करती थी। माँ की दयालुता ने उनको मानवतावादी इन्सान बना दिया। इसी बीच अचानक सन्-

१६ अगस्त १९७९ को राकेशजी की माँ की मृत्यु हुई तब राकेश पूरी तरह टूट गए। माँ के असीम विश्वास के बलपर जिंदगी में उन्होंने कितने युद्ध लड़े और जीते थी। उन्हें सही रास्ते का निर्देशन करनेवाली उसकी माँ ही थी। माँ चली गयी तो वे अकेलेपन महसूस करने लगे।

* पि ता *

राकेशजी के पिता का नाम श्री. करमचंद गुगलानी था। राकेशजी के पिता पेशे से यद्यपि वकिल थे, पर उनकी आर्थिक स्थिति कोई विशेष अच्छी नहीं थी। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि वे उतने वकील नहीं थे, या वकीलोंवाले हथकण्डों से परिचित नहीं थे जितने शास्त्र, साहित्य आदि में अपनी पहुँच रखते थे। वे वकालत में अपने समकालीन वकीलों के समान धन अर्जित न कर सके। इसी कारण पारिवारिक जीवन आर्थिक विषमताओं से जूझते हुए भी व्यतीत हो रहा था। वकालत के साथ-साथ उन्हें साहित्यिक रुचि भी घरपर थी। उनके साहित्यिक मित्र भी आया करते थे। उनमें प्रमुख उपेंद्रनाथ अश्कजी भी थे। इनके घर पर साहित्यिक चर्चाएँ चला करती थी। इसी का प्रभाव मोहन राकेश पर पड़ा। मोहन राकेश के पिता साहित्य के साथ-साथ संगीत में भी अधिक रुचि रखते थे। उनका स्वभाव शांत और सरल था। इसी स्वभाव के कारण वे अनेक आर्थिक संकटों में पड़ गये थे। इसे भुलाने के लिए वे अपने मित्रों के साथ देर तक गप्पे हाँका करते थे। इसका भी संस्कार राकेश पर पड़ा और यही सीख उन्हें एक रास्ता दिखा गयी। राकेश जब १२ वर्ष के थे तो वे उनके साथ मित्र की तरह बातें करते थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि राकेश के पिता

छोटे लड़कों के साथ बड़ों जैसा बर्ताव किया करते थे। यही असर मोहन राकेश को अच्छा व्यक्ति बनाने के लिए पिता की सृजनशीलता का अच्छा योगदान रहा। उनकी मृत्यु ८ फरवरी सन्-१९४१ में हुयी।

* भाई - बहन *

मोहन राकेश को एक बड़ी बहन और छोटा भाई जिसका नाम वीरेन था। पिता की मृत्यु के बाद भाई-बहन की जिम्मेदारी राकेशजी पर आ पड़ी। उसी में बहन की मृत्यु सन-१९४७ में हो गयी। वीरेन मोहन राकेशजीकी शादी के पश्चात घर छोड़कर बम्बई चला गया। अनीता राकेश एक जगह लिखती हैं- "दोनों भाई कभी एक नजरिए से नहीं देख सके। भाई का कहना था कि जितना भला उन्होंने अपने मित्रों का किया है उतना भला उन्होंने कभी अपने भाई का न चाहा है, न किया है।"३ वीरेन बम्बई चले जाने के कारण माँ अस्वस्थ हो गयी। माँ की मृत्यु के पश्चात मोहन राकेशजी ने उसे बहुत समझाकर घर वापस चले आये। माँ के चले जाने का इतना दुःख न होगा यह धारणा मोहन राकेश की थी, लेकिन वीरेन वापस न आ सका।

* शिक्षा और अस्थिर नौकरियाँ *

मोहन राकेशजी का प्रथम परिचय संस्कृत से हुआ था। उनके पिता उन्हें घर पर ही पढ़ाया करते थे। अपने सोलह साल की आयु में ही उन्होंने संस्कृत की ऑनर परीक्षा पास की थी। विषम परिस्थितियों में भी मोहन राकेश ने अपनी शिक्षा का

क्रम टूटने नहीं दिया। आरम्भिक शिक्षा अमृतसर में ही प्राप्त करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए लाहौर चले गये। लाहौर के " ओरिएण्टल कॉलिज" में दाखिल होकर उन्होंने बड़ी कर्मठता और सजगता से संस्कृत में एम्. ए. उत्तीर्ण की। तत्पश्चात देश विभाजन के कारण जालंधर चले गये। फिर भी ज्ञानार्जन के प्रति जो एक सहजात लगन और प्यास थी, उसने उन्हें इतने से ही बस नहीं करने दिया। अध्ययन का क्रम अनवरत जारी रहा। सन-१९५२ में उन्होंने अनवरत अध्ययन करते हुए प्रथम श्रेणी में पंजाब विश्वविद्यालय से एम्. ए. परीक्षा उत्तीर्ण की। अपने विद्यार्थी जीवन में उन्हें आर्थिक तथा मानसिक प्रतिकूल परिस्थितियोंका सामना करना पड़ा था। छात्रावस्था में राकेश ट्यूशन करके अपनी पढ़ाई का खर्च चलाते थे।[4] वे इन पैसों से शिक्षा के साथ-साथ घर खर्चा भी चलाते थे। "टयुशन" बंद हो जाने के बाद प्रिन्सिपल डॉ. लक्ष्मण स्वरूपजी ने पढ़ाई पूर्ण करने में आर्थिक सहायता की थी। एम्. ए. के पश्चात राकेशजी को " रिसर्च फेलोशिप" भी मिला करती थी।

इसके बाद वे जीवन के कार्यक्षेत्र में अवतरित हुए। सबसे पहले आर्थिक बोझ हल्का करने के लिए उन्हें "सिडन होम" कॉमर्स कॉलिज में "पार्ट टाईम" नोकरी करनी पड़ी। इससे उन्हें पचहत्तर रुपये मिलते थे। सन-१९५० से सन-१९५४ के बीच का समय राकेश के लिए काफी उथल-पुथल का था। विभाजन के बाद वे बम्बई के "एलफिस्टन कॉलिज" में हिन्दी के लेक्चरर हुए। आँखें कमजोर होने के कारण सन-१९४९ में उनसे वह नौकरी छूट गयी। फिर जालन्धर के डी. ए. वी. कॉलिज में लेक्चरर हुए। ६ महीने के बाद वहाँ से भी हटना पड़ा। बाद में सिमला के " बिशप कॉटन स्कूल" में लगे। सन-१९५० के अंत में विवाह किया, जो निभ न सका। सन-१९५२ में

वह नौकरी छोड़कर स्वतंत्र रूप से लेखन करने का निश्चय किया, लेकिन यह संकल्प निभ न पाया, इसलिए डी. ए. वी. कॉलिज जालन्धर में सन-१९५३ में हिन्दी विभागाध्यक्ष बनकर गए। यह उनकी जिन्दगी की सबसे लम्बी नौकरी थी। चार वर्ष चार माह नौकरी करने के बाद उन्होंने सन-१९५७ में उसे भी छोड़ दी। इसी वर्ष पत्नी से तलाक भी ले लिया। सन-१९६० में दिल्ली विश्वविद्यालय में लेक्चरर की नौकरी की और जल्द ही छोड़ दी। सन-१९६२ में " सारिका " के सम्पादक बने और सन-१९६३ में वहाँ से भी अलग हो गए। यह उनकी अंतिम नौकरी थी। इस्तीफ़ा के बारे में दोस्त श्रीकांत वर्मा ने लिखा है- " मोहन राकेश का इस्तीफ़ा उनकी जेब में हुआ करता था। जो भी व्यवस्था पसंद नहीं आयी, इस्तीफ़ा देकर चले गये।"[5] इस तरह इस्तीफ़े के डोर से उनकी नौकरियाँ बँधी हुईं थी। साथ ही डॉ. मीना पिंपलापुरे लिखती है - " मोहन राकेश बार-बार नौकरियाँ छोडते हैं, पर यह कोई स्वयं का वरण नहीं इसके कारण हो सकते हैं, जिनमें प्रमुख हैं, उनका स्वाभिमान जो पूरी तरह समर्पित नहीं हो पाता अथवा सम्पूर्ण समझौते के लिए तैयार नहीं होता।"[6]

-x-

* व्याकुलता और अस्थिरता से ग्रसित राकेश *

उम्र के सोलहवें साल में ही अपने पिताजी की ८ फरवरी सन-१९४१ में मृत्यु हो गयी। यही घटना राकेश के व्यक्तित्व को जटिल बनाने में बहुत बड़ा हाथ था। इसी घटना के कारण राकेश के बालमन पर आघात पहुँचा। पिताजी की मृत्यु के कारण घर का सारा बोझ राकेशजी पर आ पड़ा। भूतकाल की दहशत और भविष्यकाल के अंधेरेपन ने राकेश को बड़ी उलझन में डाल दिया। मोहन राकेश मूलतः संवेदनशील और भावुक थे। राकेश पर माँ, बहन और भाई का दायित्व छोड़कर पिता चल बसे थे जिस घर में वे रहते थे उस घर का किराया न चुकाने के कारण मकान मालिक ने कहा था " मैं मुरदा नहीं उठाने दूँगा, जब तक किराया अदा नहीं किया जाता। मैं किसी को मुर्दे को हाथ नहीं लगाने दूँगा।"[9] माँ के हाथों की चुड़ियाँ बेचकर पिता के अंतिम संस्कार की तैय्यारी की थी। ऐसे कई प्रसंग उनके जीवन में आये और राकेश के मन को प्रभावित करते गये। उनमें आत्मीयता की अनबुझी प्यास थी। अतिवादी प्रवृत्ति के कारण ज्यादातर वे उदास रहते थे। पढ़ने में मन नहीं लगता था। उदासी दूर करने के लिए वे इतस्ता घूमा करते थे।

* लेखन की जिज्ञासा *

शुरू से ही राकेशजी को लेखन में रुचि थी। अपने जीवन में उन्होंने लेखन को ज्यादह महत्व दिया था। वे अपनी पत्नी अनीता को बार - बार कहा करते थे, जिन्दगी में पहले

नंबर पर मेरे लिए लेखन है, दूसरे नंबर पर मेरे दोस्त और तीसरे नंबर पर तुम लेकिन तीनों ही मेरे लिए आवश्यक हैं यह एक ध्रुव सत्य था। जब भी उन्हें वक्त मिलता था तो वे लेखन का काम किया करते थे। उन्होंने अपने जीवन में इतना दुःख पाया था कि अगर वे लेखन न करते तो जिन्दगी से हाथ धो बैठते। वे अपने जीवन में आये दुःखों को भुलाने के लिए लेखन किया करते थे। राकेश के लेखन के प्रति उनके निकट के मित्र कमलेश्वरजी ने अपने विचार प्रकट किये हैं कि - " बड़ी बेतरतीब जिन्दगी है मेरे दोस्त की, पर सतह के नीचे उतरते ही एक जबरदस्त अनुशासन दिखाई पड़ता है, वह अनुशासन है दिमाग का और सृजन का। ऊपरी जिन्दगी में वह जितना असंगठित और सुव्यवस्थित है उसके लेखन की प्रक्रिया। "[8]

लेखन के प्रति मोहन राकेश ईमानदार थे। वे अपने लेखन कार्य को कभी अधूरा नहीं छोड़ते थे। एक बार कलम उठाई तो उसे पूरा करके ही छोड़ते थे। ज्यादातर स्वास्थ्य बिगड़ने और बाहर जाने से ही लेखन कार्य अधूरा रहता था। राकेश के जीवन में आर्थिक विपन्नता, नौकरियों को स्वीकार करना और इस्तीफा देना इन अस्थिरताओं के कारण वे ज्यादा लिख न सके।

* मित्र परिवार *

मोहन राकेशजी का परिवार उनके मित्रों के कारण बहुत बड़ा बना हुआ था। अपने मित्रों के लिए राकेश के घर के दरवाजे हमेशा खुले रहते थे। इनमें कुछ अन्य और साहित्यिक मित्र भी थे। साहित्यिक मित्रों में से कमलेश्वर, डॉ. मदान, राजेंद्र यादव, मन्नू भंडारी और भारतभूषण अग्रवाल प्रमुख थे। सबसे निकट कमलेश्वर ही थे। इनके बारे में अनीता राकेशजी लिखती है - " इनमें अगर इनका कोई सबसे ज़्यादा तकलिफ देनेवाला लेकिन आत्मिय मित्र था तो वह एक मात्र कमलेश्वर ही थे। पता नहीं उन्होंने राकेशजी को क्या सुँघा रखा हुआ था।"[१] कमलेश्वर जो मोहन राकेश की आत्मा को पहचानने वाले थे। राकेश कमलेश्वर से कुछ छिपाते नहीं थे। सभी बातें खुलकर कह डालते थे। वे अपने जीवन में लेखन के पश्चात मित्रों को ही महत्व दिया करते थे।

मोहन राकेशजी ने अपने जीवन में हर एक दोस्त को कोई न कोई महत्व दिया था। वे हर एक मित्र की कमजोरी को पहचानते थे। किसी भी व्यक्ति की आंतरिक दुःखों के साथ ही उसे अपना प्यारा दोस्त या व्यक्ति समझकर प्यार किया करते थे। उनके मित्र भी राकेश की तरह ईमानदार थे। अनेक लोग यह मानते थे कि मोहन राकेश अपने मित्रों के

लिए जीते थे। वे घर में और बाहर दोनों जगह अपने दोस्तों के साथ व्यस्त रहा करते थे। उनके शब्दों में मिठास थी। इसी कारण विश्व में उनका कोई दुश्मन नहीं था। उनकी इसी विशेषताओं के कारण दुश्मन भी दोस्त बन जाते थे। उन के व्यक्तित्व के बारे में कृष्णचंदर लिखते हैं " उनके पास एक स्वस्थ शरीर था, आकर्षक चेहरा था और उनकी आँखें सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु के भीतर तक पहुँचकर उनकी आंतरिकता को उजागर करने की क्षमता रखती थी। उनके व्यक्तित्व का प्रभाव सब व्यक्तियों पर पडता था। उनका स्मित जब ठहाके में बदलता था, तब ऐसा लगता मानो हँसी का भूचाल आ गया हो।"[10] राकेश कहीं भी चले गये तो वे हर एक को अपना दोस्त बना लेते थे। एक दिन वे दिल्ली में मुसिबत में पड गये थे तो एक टॅक्सि वाले ने उन्हें मुसिबत से निकाला था। लेकिन उन्हें उस टॅक्सिवाले का नाम भी मालूम नहीं था। एक बार दोस्ती कर लेते तो वे उसे कभी नहीं भूलते थे।

* वैवाहिक जीवन *

मोहन राकेशजीने अपने जीवन में अहं के कारण अनेक झटके खाएँ हैं। इन्हें अपना परिवार बसाने के लिए तीन बार प्रयास करना पड़ा। इन तीनों में से दो विवाह में उन्हें धोखा मिला। मोहन राकेशजी ने अपने जीवन में तीन लडकियों के साथ विवाह किया। इनमे से प्रथम सुशिला नामक लडकी से सन - १९५० में विवाह किया। वह "ट्रेनिंग कॉलिज" में अध्यापिका थी। इस लडकी से शादी करने का उद्देश्य राकेशजी का यह था कि वे सुशीला की तनख्वाह पर घर

का खर्चा चलाएँ और खुद लेखन कार्य में मग्न रहें। उसी समय उन्हें "प्राविडेंट फंड " भी प्राप्त हुआ था। किसी ने कहा है दुनिया स्वार्थी है जिससे स्वार्थ सधता है उसी के पीछे चली जाती है। उसी तरह सुशीला भी मोहन राकेश का साथ तब तक दे सकी जब तक उनके पास "प्राविडेंट फंड " की रकम थी। जब वह खत्म हुई तो राकेशजी से अलग हो गयी। यह मोहन राकेश सह नहीं सके। अपने साथ - साथ उन्हें माँ का अनादर भी सहना पड़ा। भाई वीरेन घर के इस घुटन भरे वातावरण से अलग हो गया। मोहन राकेश विवाह को एक समझौता, "अॅडजेस्टमेंट" मानते थे। राकेशजी का भावुक हृदय सुशीला के कारण छला गया। उन्हें बनावटीपन से चिढ़ निर्माण होने लगी। जॅहा वे अपनापन चाहते थे वहाँ उन्हें अनादर मिला। परिणामत: राकेश के मन में "स्त्री" के लिए एक कडुवाहट बनी रही। वे कहा करते थे - " औरते तो पानी का गिलास हैं, पिया और खाली कर दिया फिर लिखने बैठ गये।"[११]

असल में मोहन राकेशजी ने सुशीला के साथ वैवाहिक जीवन की मौज मजा कुल डेढ़ साल तक ही ले सके। सन्-१९५२ से सन्-१९५७ तक दोनों एक दूसरे से दूर रहने लगे। अपनी आर्थिक कठिनाई दूर करने के लिए उन्हें इस काल में नोकरी करनी पड़ी। इसी बीच वे अपना निरर्थक वैवाहिक जीवन जीते रहे। परिणामत: उन्होंने सुशीला से तलाक लेने का निश्चय किया। इसी बीच उन्हें सुशीला माँ बनने वाली है यह खबर सुनकर धक्का ही लगा। अन्तत: सन-१९५७ में उन्हों-ने सुशीला से तलाक ले लिया। सुशीला से प्राप्त बेटे का नाम उन्हो-ने " नवनीत" रखा था। जब उन्हें अपने बेटे की याद आती तो असहनीय

पिड़ा सह लेते। इस प्रकार सुशीला से उनका वैवाहिक जीवन नीभ नहीं सका।

इसी वैवाहिक जीवन से नाराज होकर उन्होंने "पुष्पा" से विवाह किया। वह अपने ही मित्र की बहन थी। विवाह के पूर्व इन दोनों में मुलाकात भी हुई थी। सुशीला के व्यक्तित्व से " पुष्पा" का व्यक्तित्व बहुत ही अलग था। पहली पत्नी सुशीला में हठ और अहं था तो पुष्पा में विनय और समर्पणता थी। इस विवाह के लिए मोहन राकेश का विरोध था। पुष्पा वास्तविक रूप से मानसिक - विक्षिप्त थी। जीवन से वे बार-बार हारते रहे। पुष्पा हँसते-हँसते बेहोश हो जाती थी। कहा जाता है पुष्पा रोते समय देवी का रूप धारण कर लेती थी। जीवन में लगातार हारने के कारण उन्हें पत्नी नाम से डर लगता था। अंत में उन्होंने पुष्पा की विक्षिप्त अवस्था के कारण तलाक लेने का निश्चय किया और पुष्पा से भी वे अलिप्त हो गये।

इन्होंने अपने वैवाहिक जीवन में अनेक विसंगतियोंको झेला था। इस विसंगतियों से मुक्ति पाने का जी तोड़ प्रयास किया था। मोहन राकेशजी ने स्त्री के प्रति किसी भी प्रकार का आदर्शभाव नहीं रखा। उनके जीवन को अधिक तर नारियों ने ही बरबाद किया था। इन दो असफल विवाहें के कारण वे मानसिक-रूपसे बरबाद हो चूके थे। वैवाहिक जीवन में स्थिरता पाने की आशा में अपने साहित्य की और उनकी फॅन श्रीमती चंद्राजी अलौक की बेटी अनीता अलौक से शादी करके प्रयास किया। और वे यह वैवाहिक जीवन अंत तक अच्छी तरह से जीते रहे। शुरू में अनीता और मोहन राकेश के बीच घनिष्ट सम्बन्ध होते गये और प्रथम

१ मुलाकातें और बादमें फ्रोंका लम्बा सिलसिला जारी रहा।

अनीता बहुत भोली भाली और कद से छोटी थी। इस शादी के लिए राकेशजी के घर के सभी सदस्य विरोध कर रहे थे। लेकिन उन विरोधों को न मानते हुए मोहन राकेशजीने २२ जुलाई सन्-१९६३ में अनीता से चुपचाप शादी कर ली। उस समय अनीता २१ साल की थी तो राकेशजी की आयु ३८ साल की थी। इस आयु के लंबे अंतर के बावजूद भी मोहन राकेशजी ने अनीता पर सारी जिम्मेदारियाँ सौंप दी। उन्होंने पहली रात में ही अनीता को बता दिया था- "मुझे घर चाहिए ---अन्ना " घर " मुझे जिंदगी में सब कुछ मिला --- सिर्फ एक घर नहीं मिला। --- क्या तुम मेरे लिए एक ऐसा घर बना सकोगी जो मेरे, सिर्फ मेरे अनुकूल ही हो ?[१२]

राकेशजी की इस मांग को अनीता ने एक दुःखी, थके हारे व्यक्ति को सँभालने की और उसके लिए उसके अनुकूल घर बनाने की हामी भरी थी। अनीता का प्यार राकेशजी के दर्द भरे जीवन में अनोखी मिठास ठहरा जो हर एक के मनको भी हल-के से छू देता है। स्त्री के समझौते ने, स्त्री की आत्मीयताने राकेश को पकड़ी राह से हटने न दिया। राकेशजी तो - " तू ने मेरा रेकॉर्ड खराब कर दिया है। दो साल से ज्यादा मैं किसी औरत के साथ नहीं रहा। पहले मैंने सोचा कि दो - तीन साल के बाद चली जाएगी लेकिन छः साल हो गये तेरे जाने का कोई असर ही नजर नहीं आ रहा। पहले एक बच्चा फिर दूसरा -- अब तीसरे का इरादा तो नहीं-- अच्छा यह सोच के बताना की कब जा रही है।"[१३]

अनीता से मोहन राकेश को एक लड़की और एक लड़का प्राप्त हुआ जिनके नाम पूरवा और शालीन था। इन दोनों के

रूप में अनीता ने राकेश को प्यार में बाँध डाला। राकेश इन दो बच्चों से बहुत प्यार किया करते थे। इस तरह अंत तक राकेशजी अनीता के साथ अपना वैवाहिक जीवन बड़ी खुशी से जीते रहे।

** स्व भा व **

अपने जीवन में भूतकाल में घटित घटनाएँ और भविष्यकाल में घटित होनेवाली घटनाओं के बारेमें सोचना छोड़ दिया था। उनका अपना जीवन वर्तमान स्थितिपर आश्रीत था। वर्तमान स्थिति में जो उनके बस में है उसे ही लेकर वे जिन्दगी जीना चाहते थे। अपने जीवन में घटित अनिश्चितता के कारण उनका मन विचलित था। वे अपना जो भी निर्णय लिया करते थे वे झट से नहीं ले पाते थे। उनके स्वभाव में एक बात महत्वपूर्ण यह थी की अपना गम वे दूसरों को नहीं बताते थे। दूसरों को खुश दिखाई देने की कोशिश किया करते थे। उन्होंने साथही अपने कारण कभी दूसरों को तकलीफ नहीं होने दिया। वे उदासी से मिश्रीत आनंद का जीवन जीते थे। उनकी हँसी के कारण सारा वातावरण आनंदमय हो जाया करता था। राकेश के स्वभाव के बारे में दोस्त कमलेश्वर लिखते है - "वह हँसता, तो तारों पर बैठी हुई चिड़ियाँ पंख फड़फड़ाकर उड जातीं और राह चलते ऐसे चौंककर देखते जैसे किसी को दौरा पड़ गया हो।"[१४]

मोहन राकेश ईमानदार थे। वे किसी का तो क्या, अपना झूठ बोलना भी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे। उनका कहना था कि - " वो आदमी क्या जो अपने शब्दों को भी ओवर नहीं कर सकता।"[१५] सबसे पहले मोहन राकेश ईमानदार थे

तभी वे दूसरों के साथ ईमानदारी से पेश आते थे। उन्होंने अपने जीवन काल में की हुई सभी नौकरियाँ भी ईमानदारी से कीं। वे अपने मित्रों के साथ-साथ अन्य सभी से भी ईमानदारी से पेश आते थे। (उन्होंने अपनी जिंदगी भी ईमानदारी से जी।) मोहन राकेश व्यवहार के साथ - साथ अपने लेखन में भी ईमानदार थे। वे कभी अपने अंदर की बात को अंदर नहीं रख सकते थे। कोई बात तत्काल और कोई बात कुछ समय के बाद जरूर बता देते थे। मोहन राकेश ईमानदारी का महत्वपूर्ण प्रश्न उठाते हैं और कहते है- "लेखक का वास्तविक कमिटमेण्ट किसी विशेष विचारधारा से न होकर अपने से, अपने समय से और समय के जीवन से होता है।"

राकेशजी अहं के कारण अपने वैवाहिक जीवन में असफल रहे। उनके व्यक्तित्व में सबसे बड़ा पहलू यही अहं था। इसी अहं के कारण वे कठिन परिस्थितियों में कमज़ोर नहीं बने। वे एक उत्कृष्ठ साहित्यकार इसी के कारण बन सके। कोई भी निर्णय वे सोच-समझकर लेते थे। वे अपने साथ रहनेवाले सभी को समझाते थे, लेकिन उन्हें किसी ने समझा नहीं था।

—*—

* अंतिम समय *

जिन्दगी से अनवरत सामना करके अपना जीवन व्यतीत करने-वाले मोहन राकेशजी की हृदय गति रुक जाने के कारण ३ दिसंबर सन-१९७२ में अंत हो गया। उस समय वे " सही शब्द की खोज" पर शोध कार्य कर रहे थे। उनकी मृत्यु के बारे में अनीता राकेशजी लिखती हैं - " राकेशजी चले गये थे ---- इसका दुःख इसलिए इतना नहीं था कि मुझे और बच्चों को अकेला छोड़ गये -- बल्कि इसलिए कि उन्हें जीने का शौक था -- उन्हें जिंन्दगी से बहुत मोह था। वही एक व्यक्ति था जिसे जीना आता था, जिसने लोगों को जीना, हँसना, खेलना सिखाया था।"[१६]

उनके चले जाने के पश्चात साहित्य क्षेत्र में एक रिक्तता निर्माण हो गयी। सभी मित्र परिवार गहरे दुःख में डूब गये थे।

--*--

* कृतित्व *

एक सर्जक कलाकार के रूप में मोहन राकेश की प्रतिभा का प्रथम प्रस्फुटन कहानी के रूप में ही सम्भव हो सका। मोहन राकेशजी को "नई कहानी" के प्रस्तोता का महत्व भी प्राप्त है। कहानी के बाद वे उपन्यास क्षेत्र में आये। उसके बाद उन्होंने नाटक, एकांकी नाटक और निबन्ध-रचना जैसे अन्य विधात्मक साहित्यिक रूपों को अपनाकर एक कुशल कलाकार के रूप में बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया। मोहन राकेश की विशिष्ठ प्रतिभा का मान नाटककार के रूप में ही प्रतिष्ठापित हो सका, अत: उन के समग्र कृतित्व का आकलन सृजन की विधात्मक प्रक्रियाओं की दृष्टि से उनके प्रकाशित साहित्य को प्रथम कहानी साहित्य का परिचय देंगे।

* कहानी साहित्य *

मोहन राकेश अपने विद्यार्थी काल से ही कहानियाँ रचने लगे थे। जब उन्होंने अध्यापन के क्षेत्र में प्रवेश किया था, तो कहानी रचने की अधिक रुचि परिपक्व होकर उभरी। जालन्धर में अध्यापन कार्य करते समय उन्होंने "भिक्षु(?)" नामक कहानी रची लेकिन तब उसे प्रकाशन न मिल सका। मोहन राकेशजी के स्वर्गवास के उपरान्त उनकी पहली कहानी के नाम से उसे "सरिता" मासिक में ही प्रथम प्रकाशन मिल सका। उनकी प्रथम प्रकाशित कहानी "भिक्षु" शीर्षक की थी, जिसका प्रकाशन "सरस्वती" जैसी गौरवमयी पत्रिका में हुआ था। इस कहानी का प्रकाशन काल भारत विभाजन के पूर्व सन - १९४६ है। तब कहानीकार मोहन राकेश से कोई भी परिचित नहीं था। "दो राहा" यह कहानी मोहन राकेशजी

को साहित्य क्षेत्र में प्रतिष्ठा दिलानेवाली कहानी ठहरी। जो सन-१९४७ में "सरिता"मासिक में प्रकाशित हुई थी। इसके बाद उनकी " मलबे का मालिक " नामक कहानी प्रकाशित हुई/इसी कहानी के कारण कहानीकार के रूप में उनकी धाक जम गई। उन्होंने सैकड़ों कहानियाँ रचीं, जो समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। साथ ही संकलनों के रूप में भी प्रकाशित हुईं। उनके अभी तक प्रकाशित कहानी संग्रह निम्नलिखित है -

	कहानी संग्रह	प्रकाशन	प्रथम प्रकाशन वर्ष
[१]	इन्सान के खण्डहर	प्रगति प्रकाशन दिल्ली	सन्-१९५७
[२]	नये बादल	भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी.	सन्-१९५७
[३]	जानवर और जानवर	राजकमल प्रकाशन	सन्-१९५८
[४]	एक और जिन्दगी	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९६१
[५]	फौलाद का आकाश	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली.	सन्-१९६६
[६]	आज के साये	-	सन-१९६७
[७]	मिले जुले चेहरे	राधाकृष्ण प्रकाशन	सन्-१९६९
[८]	क्वार्टर	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९७२
[९]	वारिस	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९७२
[१०]	पहचान	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९७२
[११]	मेरी प्रिय कहानियाँ	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९७१
[१२]	एक घटना	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९७४
[१३]	सुहागिनें	हिन्द पॉकेट हाउस	सन्-१९६६
[१४]	संपूर्ण कहानी संग्रह	राजपाल प्रकाशन	सन्-१९८४
[१५]	पाँच लम्बी कहानियाँ	राजकमल प्रकाशन	सन्-१९६०

इस प्रकार कुछ अन्य प्रकाशकों ने भी मोहन राकेश के संकलनों में से चुनकर उनका अलग संकलन के रूप में प्रकाशन किया है। उनके पश्चात पत्र - पत्रिकाओं में भी कुछ अप्रकाशित कहानियाँ प्रकाश में आईं/तथा आ रही हैं, जिनका प्रकाशन होना अभी शेष है।

-*-

* उपन्यास साहित्य *

कहानी साहित्य के अनन्तर, बल्कि समानान्तर (पर) ही मोहन राकेश का उपन्यास साहित्य भी हमारे सामने आने लगता हैं। उपन्यासकार के रूप में राकेश को सफलता और प्रसिद्ध प्राप्त न हो सकी, फिर भी उनके रचे उपन्यासों का अपना एक अलग महत्व एवं वैशिष्ठ्य है। रचना क्रम की दृष्टि से स्वर्गीय राकेशजी ने "स्याह और सफेद " शीर्षक उपन्यास ही सर्व प्रथम रचा था। लेकिन किन्हीं विशेष कारणों से वह प्रकाशित नहीं हो सका। प्रकाशन क्रम की दृष्टि से राकेशजी के उपन्यासों के नाम, प्रकाशन और प्रकाशन काल निम्नलिखित हैं -

उपन्यास	प्रकाशन	प्रकाशन काल
[१] अन्धेरे बंद कमरे	राजकमल प्रकाशन	सन - १९६१
[२] न आनेवाला कल	राजपाल प्रकाशन	सन - १९६८
[३] अंतराल	राजकमल प्रकाशन	सन - १९७२
[४] स्याह और सफेद	प्रकाश्य	-
[५] काँपता हुआ दरिया	-"-	-
[६] कई एक अकेले	-"-	-

प्रथम उपन्यास "अन्धेरे बंद कमरे" में राकेशजी ने उच्च मध्यवर्ग के क्रिया कलापों की पृष्ठभूमि पर सांस्कृतिक सम्बन्धों की टकराहट, टूटते सामाजिक सम्बन्धों आदि का बड़ा ही यथार्थ एवं सजीव चित्रण किया हैं। इसमें द्वन्द्व की प्रधानता है। दिल्ली महानगर

अपने समग्र परिवेश में जैसे सजीव साकार हो उठा है। राकेशजी इस उपन्यास के बारे में लिखते हैं - " मैं सोचकर भी तय नहीं कर पा रहा कि इसे [उपन्यास को] क्या कहूँ : आज की दिल्ली का चित्र ? पत्राकार मधुसूदन की आत्मकथा ? हरबंस और नीलिमा के अन्तर्द्वन्द्व की कहानी?"[१७]

" न आनेवाला कल " मोहन राकेशजी का दूसरा उपन्यास है जिसमें उन्होंने अपने निजी अनुभवों का उपयोग पर्याप्त मात्रा में किया है। उनकी जीवनी में लिखित जो बिशप कॉटेज स्कूल, शिमला में अध्यापन कार्य किया था। " जानवर और जानवर " कहानी को हम " न आनेवाला कल " की भूमिका कह सकते हैं। " न आनेवाला कल" यह उपन्यास अस्तित्ववादी जीवन - दर्शन पर आधारित है। कुल मिलाकर यह उपन्यास अपनेही अस्तित्व से घबराये हुए व्यक्ति की कहानी प्रस्तुत करता है।

"अन्तराल" यह मोहन राकेशजी का तृतीय उपन्यास माना जाता है। इस उपन्यास में सामाजिक मान्यताओं और सम्बन्धों में आ गये मूलभूत तनाओं और दरारों का सशक्त चित्रण किया है। इसमें उभरा द्वन्द्व वास्तव में आज की द्वन्द्वग्रस्त समग्र मानव चेतना का द्वन्द्व हैं। इस प्रकार हम कह सकते है कि उपन्यासकार के रूप में भी स्वर्गीय मोहन राकेश ने कहानी के समान ही समग्र सशक्त संभावनाओं को आयाम दिया है। -

--*--

पृ. 27

* निबन्ध साहित्य *

मोहन राकेशजी ने उपन्यासों के समान निबन्ध साहित्य को गतिशील एवं परिवर्तनशील जीवन और उसके मानव बोध को बड़ी ही पैनी दृष्टि से पकड़ने का सफल प्रयास किया है। अपनी सर्जनाओं की भूमिका के रूप में उन्होंने कुछ आलोचनात्मक निबन्ध रचे। उनके निबन्ध साहित्य के अंतर्गत निम्नलिखित रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। जो इस प्रकार हैं। सन-१९६७ में "परिवेश" (यह) निबन्ध संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ ने प्रकाशित किया। सन्-१९७४ में "बलकम खुद," सन्-१९७५ में राधाकृष्ण प्रकाशन से " साहित्य और सांस्कृतिक दृष्टि" निबंन्ध संग्रह प्रकाशित हुए। उनके कुछ निबन्ध संग्रह पत्र - पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुए हैं। इन सबमें चिन्तक और विचारक मोहन राकेश का स्वरूप स्पष्टतः देखा जा सकता है।

* नाटक और एकांकी साहित्य *

* नाटक *

मोहन राकेश सन् - १९४७ से ही एक समर्थ कहानीकार के रूप में साहित्य क्षेत्र में उदय हो चुके थे। देश विदेश में नाटकों ने ही उन्हें प्रतिष्ठा प्राप्त करा दी। उनके व्यक्तित्व का सारा द्वन्द्व और - उनका जागरूक चेतन नाटकों में ही सर्वाधिक प्रखरता से चित्रित हुआ है। मोहन राकेशजी ने नाटक बहुत कम लिखे लेकिन कलात्मक एवं रंगमंच आदि की दृष्टि से राकेश के नाटक महान व्यक्तित्व के नाटकों से कई आगे हैं।

इनके नाटक आधारित: ऐतिहासिक पृष्ठभूमियोंपर

रचे गये हैं। पर उनका "अन्तराल", उनका भावबोध जितना ऐतिहासिक है, उससे भी कई अधिक आधुनिक है।

"आषाढ का एक दिन" मोहन राकेश का पहला नाटक है, जो सन् - १९५८ में राजपाल प्रकाशन ने प्रकाशित किया। इसमें महाकवि कालिदास को लेकर रचा गया है। यहाँ नाटककार का उद्देश्य कालिदास के माध्यम से एक ऐसे सर्जक का चित्र प्रस्तुत करना है जिसके अपने द्वन्द्व होते हैं। एक कवि को प्रतीक रूप में व्याख्यायित करना राकेश का प्रमुख उद्देश्य है। यह नाटक मोहन राकेश की प्रथम नाट्य रचना होते हुए भी उनकी प्रौढ़ कृति है।

" लहरों के राजहंस " मोहन राकेशजी का दूसरा नाटक है जो सन्-१९६३ में राजकमल प्रकाशन ने प्रकाशित किया। इसमें अश्वघोष के " सौन्दरनन्द" काव्य से प्राप्त की जिसका उल्लेख उन्होंने नाटक की भूमिका मे किया है। इस नाटक की कथा में इतिहास और कल्पना का संयोजन हैं। नाटक के प्रथम अंक में ही कामोत्सव का आयोजन है, यह उसके ऐतिहासिक - सांस्कृतिक पक्ष को स्पष्ट करता हैं। इस नाटक की कथा संक्षिप्त है और नाटककार का मुख्य उद्देश्य सुन्दरी के अंन्तर्द्वन्द्व का चित्राण करना है। जो बुद्धदेव को अपने ढंग से चुनौती देती है। "आधे अधूरे " ऊपरी तौर के दो नाटकों से भिन्न प्रकार का है इसका फलक सामाजिक है। इसके दो खण्ड हैं : पूर्वार्ध और उत्तरार्ध। " आधे - अधूरे " में एक मध्यवर्ग के पारिवारिक विघटन की कहानी है। इसके पात्र अपने में उलझे हुए हैं, जैसे एक दूसरे से बिल्कुल कट गये हैं। पुरुष पात्रों ने नकाबें ओढ़ रखी हैं, वे अपना सही जीवन भी नहीं जीते।

" पैरों तले जमीन " राकेशजी का अन्तिम नाटक है जो अधूरा रह गया था, और जिसे उनकी मृत्यु के बाद उनके

मित्र कमलेश्वर ने पूरा करके सन् - १९७५ में "राजपाल प्रकाशन दिल्ली" द्वारा प्रकाशित किया। इस नाटक में दो अंक हैं जिन्हें उन्होंने " अनुवर्तन" कहा है। -

* एकांकी साहित्य *

मोहन राकेश के जीवनकाल में एकांकी, पुस्तक रूप में प्रकाशित नहीं हो सके। उनके एकांकी संग्रह हैं - " अण्डे के छिलके " जिसमें चार एकांकी हैं, [१] अण्डे के छिलके, [२] सिपाही की माँ, [३] प्यालियाँ टूटती हैं और [४] बहुत बड़ा सवाल" आदि।"अण्डे के छिलके" एकांकी संग्रह जो राधाकृष्ण प्रकाशन ने सन् -१९७३ में प्रकाशित किया। साथही दो बीज नाटक हैं - [१] शायद और, [२] हं: । एक पार्श्व नाटक है "छतरियाँ"। बीज नाटक राकेश के मौलिक चिन्तन का प्रतीक है। राकेश के जो चार एकांकी यहाँ संकलित है उनमें " सिपाही की माँ," का परिवेश आजादी के कुछ पहले का है और शेष में सन् - १९४७ के याने आजादी के बाद का। अन्य तीनों एकांकियों में स्वतंत्रता के बाद भारतीय उपमहाद्वीप की घटनाएँ हैं।

बीज नाटक " शायद " में राकेशजी ने अपने प्रिय विषय को लिया है। इसमें स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध। आज के युग में कैसे यांत्रिक होते जाते है, उसे लेकर यह बीज नाटक रचा गया है। राकेशजी का यह बीज - नाटक घटना रहित है। इसमें दो पात्रों के माध्यम से यान्त्रिक जीवन की ऊब और उदासी को चित्रित किया गया है।

उनका दूसरा बीज नाटक है -हं: । यह मानव सम्बन्धों की टूटन को लेकर लिखा गया है। उनके एकांकी संकलन में एक पार्श्वनाटक है जिसका नाम है " छतरियाँ"। यह उनका

एक प्रकार से नाट्य प्रयोग हैं।

* अन्य गद्य कृतियाँ *

मोहन राकेश ने उपन्यास, कहानी, नाटक एकांकी के अतिरिक्त गद्य की अन्य विधाओं में भी कार्य किया है। इनमें " आखरी चट्टान तक " उनका यात्रा तथा संस्मरणात्मक वृत्तान्त है जो सन्-१९५३ में प्रगति प्रकाशन ने प्रकाशित किया। साथही " पतझाड़" का रंगमंच" और " ऊँची झील" ये दो संस्मरणात्मक वृत्तान्त प्रकाशित न हो सके।

"बलकम खुद" उनका निबन्ध संग्रह है साथ ही"परिवेश" और " साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि " भी उनके निबन्ध संग्रह हैं। "बलकम खुद" सन-१९७४ में राजपाल प्रकाशन ने तो "परिवेश", "भारतीय ज्ञानपीठ" ने सन्- १९६७ में प्रकाशित किया और " साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि" यह निबन्ध संग्रह राधाकृष्ण प्रकाशन मे सन्-१९७५ में प्रकाशित किया। "व्यक्तिगत"मोहन राकेश की डायरी राजपाल प्रकाशन ने १९८५ में प्रकाशित कि गयी।

"मृच्छकटिक - शूद्रक " सन्-१९६१, "अभिज्ञान शाकुंतलम कालिदास" - सन्-१९६५, " एक औरत का चेहरा"-" The Portait of a lady by Henry-James" ,"हिरोशिमा के फूल"- Flowers of Hiroshima by Edita Morris, उस रात के बाद"- The end of tho affair by Graham Green आदि उनके अनुवाद किये हुए ग्रंथ है।

अनुवाद के साथ - साथ उन्होंने संपादन कार्य का काम

भी किया है। "नाटक में सही शब्द की खोज" इस विषय पर राकेशजी कार्य कर रहे थे, लेकिन पूरा न कर सके। इसके अलावा "समय सारथी " नाम से ढाई हजार वर्षों के प्रमुख व्यक्तियों की जीवनियाँ भी इन्होंने लिखी हैं।

शोध कार्य के अलावा उन्होंने " बीना हाडमांस का आदमी" बाल कहानी संग्रह राधाकृष्ण प्रकाशन ने सन् - १९७४ में प्रकाशित किया। " रंगमंच और शब्द" उनका लेख है साथही और एक लेख इन्होंने लिखा है। जिसका नाम "शब्द और ध्वनि" है। इसके साथ उन्होंने रिपोर्ताज, संस्मरण तथा रेखाचित्र भी लिखे हैं।

* निष्कर्ष *

मोहन राकेशजी के व्यक्तित्व और कृतित्व देखने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि राकेशजी एक शानदार आदमी थे। उन्होंने जिंदगी को पूरी तौर से जीया था। राकेशजी में जीवन के लिए एक अजीब आकुलता थी। अपना सब कुछ दाँव पर लगा देने का फक्कड़पन था। अपने को भरा - भरा महसूस करने के लिए उन्हें अपने को रीता करना पड़ा। हर छोटी - मोटी खुशी के लिए उन्हें मुँह माँगा मूल्य चुकाना पड़ा। अपनी अपेक्षाएँ, अपने द्वन्द्व, अपनी ही मानसिकता उन्हें अंदर ही अंदर खाती रही।

अपने लेखन में उन्होंने जीवन का सत्य संजोया है। लोग इसे ठिक समझे या न समझे वे अपने को ठीक समझते थे। जो कुछ उन्होंने लिखा है, वे उन के उद्गार थे। उसे उन्होंने अपने जीवन में भोगा था। इसलिए जो कुछ उन्होंने लिखा, आंतरिक दबाव से उद्भूत था, जीवन की निजी आवश्यकताओं की देन थी।

***

संदर्भ - सूची

अ. क्र.	लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	पृ. क्र.
[१]	मोहन राकेश	आईने के सामने	१८६
[२]	कृष्णचंदर	सारिका मार्च-१९७३	६५
[३]	अनीता राकेश	चंद सतरें और	९९
[४]	डॉ. घनानंद शर्मा[जदली]	मोहन राकेश व्यक्तित्व-कृतित्व	२२
[५]	अणिमा २३ दिसंबर १९७२	-	-
[६]	डॉ. मीना पिंपलापुरे	मोहन राकेश का नारी संसार	२१
[७]	डॉ. मीना पिंपलापुरे	मोहन राकेश का नारी संसार	२५
[८]	डॉ. मीना पिंपलापुरे	मोहन राकेश का नारी संसार	२७
[९]	अनीता राकेश	चंद सतरें और	८९
[१०]	कृष्णचंदर	सारिका मार्च, १९७३	६४
[११]	वही	-	६५
[१२]	अनीता राकेश	चंद सतरें और	८०
[१३]	वही	-	९३
[१४]	कमलेश्वर	मेरा हमदम मेरा दोस्त	११
[१५]	अनीता राकेश	चंद सतरें और	१०३
[१६]	वही	-	१०१
[१७]	डॉ. मीना पिंपलापुरे	मोहन राकेश का नारी संसार.	९१